बच्चों की सोहबत

विख्यात कथाकार स्वयं प्रकाश से पल्लव की बातचीत

स्वयं प्रकाश हमारी भाषा के जाने-माने कथाकार हैं। वे बच्चों के लिए लिखने वाले गंभीर लेखक भी हैं और बच्चों की प्रसिद्ध पत्रिका 'चकमक' से उनका गहरा जुड़ाव रहा है। अपने लेखन के प्रारंभिक दिनों में उन्होंने 'परमाणु भइआ की दुनिया में' नाम से बच्चों के लिए एक उपन्यास लिखा तो प्रसिद्ध वैज्ञानिकों की जीवनियां भी। 'चकमक' के लिए वे कई वर्षों से कहानियों की शृंखला लिख रहे हैं जिसकी कुछ कहानियां 'प्यारे भाई रामसहाय' शीर्षक से राष्ट्रीय पुस्तक न्यास से प्रकाशित हुई। इस पुस्तक पर ही हाल में उन्हें साहित्य अकादेमी का प्रतिष्ठित बाल साहित्य सम्मान देने की घोषणा की गई है। इस प्रसंग में उनसे हुई बातचीत प्रस्तुत है।

हिन्दी में बाल साहित्य वैसा नहीं जैसा अंग्रेजी में या मराठी जैसी भारतीय भाषाओं में होता है। यह सही है या मान ली गई आधी अधूरी बात?

मराठी का हाल तो हिंदी से ज्यादा अलग नहीं है; बांग्ला का कुछ बेहतर है। अंग्रेजी का बहुत बेहतर है। जैसे जापानी, कोरियाई या रूसी का। उर्दू का भी हिंदी से बेहतर है। हिंदीभाषी लोग अंग्रेजी पर इतने निर्भर हो गए कि उन्होंने अपने शिशुगीत, लोरियां, झूलने और बाल-कथाएं बनाने का गंभीर उद्यम ही नहीं किया। अंग्रेजी का सब कुछ सहज उपलब्ध था। बच्चे के बोलना शुरू करने से पहले ही 'बा बा ब्लैकशीप' और 'जेक एंड जिल' बुलवाना ज्यादा आसान था, बगैर यह समझे कि बा बा ब्लेक शीप का ऐतिहासिक संदर्भ क्या है या था और जेक और जिल में कौन लड़का है कौन लड़की? और वे पानी लेने के लिए पहाड़ी पर क्यों जा रहे हैं किसी कूंए पर जाने की बजाय?... और 'लन्दन ब्रिज इस फॉलिंग' तथा 'डेफोडिल्स' का तो कहना ही क्या। मैं जब जैसलमेर में था मेरे एक अध्यापक मित्र बताते थे कि बच्चों को कदली जैसी जंघा कैसे समझाएं, उन्होंने केले का पेड़ कभी देखा ही नहीं है।

प्रेमचन्द, सुभद्रा कुमारी चौहान और अमृतलाल नागर तक ऐसी परम्परा थी जहां लेखक बड़ों और बच्चों यानी सबके लिए लिखता था। आगे राजेन्द्र यादव, सर्वेश्वर और गुलजार भी ऐसे अपवाद वाले उदाहरण हैं। यह भेद कहां से होता गया और क्यों?

यह तो पता नहीं कि कहां से हो गया लेकिन बाल साहित्य को नीची नजर से देखा तो जरूर जाता है। धीरे-धीरे बच्चों के लिए लिखने वालों की अलग पांत बनने लगी और इनमें कई तो ऐसे थे जो सोचते थे कि बच्चों के लिए तो कुछ भी लिख दो, सब चलता है।

बाल साहित्य की पत्रिकाएं भी सिमटती गईं। इसका कारण?

बाल साहित्य की पत्रिकाओं का स्थान वीडियो, सीडी और डीवीडी ने ले लिया है और बच्चों की एक से एक खूबसूरत पुस्तकें तो बाजार में उपलब्ध हैं ही। बस, एक छोटी-सी दिक्कत है कि वे अंग्रेजी में हैं। कई लेखकों को तो शायद शर्म आने लगी है कि वे हिंदी के लेखक हैं। वे फेसबुक इत्यादि पर बड़े गर्व से बताते हैं कि पुस्तक का अंग्रेजी में अनुवाद हुआ है और वे कितने खुश हैं। मैं पिछले सैंतालीस साल से लिख रहा हूं और आज तक मेरी सिर्फ दो कहानियों का अंग्रेजी में अनुवाद हुआ है और इस बात का मुझे रंच मात्र भी मलाल नहीं है, क्योंकि मैं अंग्रजों की औलादों के लिए लिख ही नहीं रहा था।

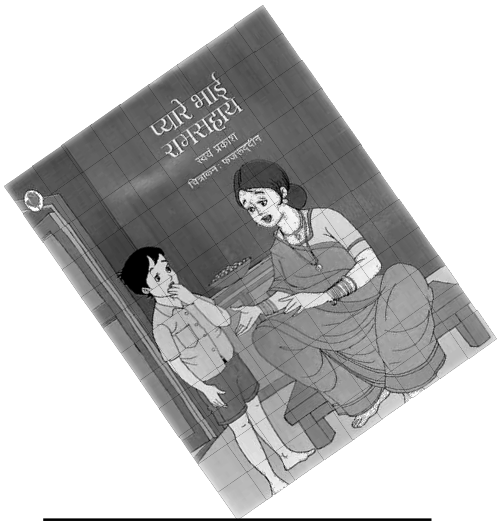

पुस्तक : प्यारे भाई रामसहाय
लेखक : स्वयं प्रकाश
प्रकाशकः राष्ट्रीय पुस्तक न्यास
संस्करण (पेपर बैक) : 2012
पृष्ठ : 51; **मूल्यः** 55 रुपये

बाल साहित्य कैसा हो? परीलोक जैसा या यथार्थ की ठोकरों भरा?

बाल साहित्य रोचक, रोमांचक और कल्पना शक्ति को उत्तेजित करने वाला होना चाहिए। हमें भूलना नहीं चाहिए कि कल्पना और कल्पना ही क्यों स्वप्न और फेंटेसी भी यथार्थ के ही एक आयाम हैं। जिस दिन इंसान सपने देखना और ऊलजलूल सोचना छोड़ देगा, वह कुछ हद तक पशुओं के समतुल्य हो जाएगा। सत्यजीत रॉय के पिता श्री सुकुमार रॉय ने शायद यही सोचकर 'अबोल तबोल' नामक नॉनसेंस लिखा, जिसका अलग ही ऐतिहासिक महत्त्व है। सुकुमार रॉय बांग्ला की अत्यंत लोकप्रिय बाल पत्रिका संदेश के संस्थापक-संपादक थे। सत्यजीत रॉय ने भी इसका संपादन किया और इसके लिए लिखा। प्रसंगवश एक बार मैंने नामवरजी से पूछा कि क्या हिंदी में नॉनसेंस नहीं लिखा जा सकता? उन दिनों मैं खुद नॉनसेंस लिखने के चक्कर में था। नामवरजी ने मुस्कराते हुए यह कहकर मेरा दिल और हौंसला तोड़ दिया कि हिंदी में कैसे नॉनसेंस होगा, लोकभाषा में जरूर हो सकता है। कह तो वह ठीक ही रहे थे, शायद मुझे राजस्थानी में लिखने की चुनौती दे रहे थे, मैं दब्बू की तरह पीछे हट गया।

बच्चों के विकास (?) में बाल साहित्य की कोई भूमिका होती है? हां तो क्या और कैसे? संदेह इसलिए कि आप तो बच्चों को बच्चा मानने से इनकार करते हैं। उन्हें जूनियर नागरिक कहते हैं। तब क्या इन जूनियर नागरिकों को अपना भला बुरा तय करने के लिए स्वतंत्र छोड़ देना चाहिए?

जूनियर सिटिजन या नन्हें नागरिक को साइंटिफिक ट्रेनिंग और रिगरस आर्टिकलशिप की सबसे ज्यादा जरूरत होती है। कितने अफसोस की बात है कि रूल्स ऑफ द रोड और दांतों की देख भाल जैसी छोटी-छोटी लेकिन जरूरी बातें बच्चों को बताने वाला भी आज कोई नहीं और छोकरे तो इतने नालायक हैं कि नौकरी करने निकलते हैं तो साले अपने लिए दो टिक्कड़ (रोटी) नहीं सेक सकते, बाजार में जाकर फास्ट फूड खाते हैं। शादी के बाद बीवी मायके चली जाए या बच्चा हो जाए तब इनकी दीनदशा देखो। मेरा तो दृढ़विश्वास है कि नवीं से बारहवीं कक्षा तक छोकरों के लिए होम साइंस एक अनिवार्य विषय होना चाहिए।

क्या बच्चे पढ़ना पसंद करते हैं? आपका निजी अनुभव?

बच्चे रहस्य-रोमांच और हम उम्र दोस्तों के सम्मिलित एडवेंचर की कहानियां सबसे ज्यादा पसंद करते हैं।

'चकमक' के संपादन से आपने क्या नया जाना? कहानियां तो पहले भी लिखते थे और 'क्यों' तथा 'वसुधा' का संपादन भी कर चुके थे।

'चकमक' के संपादन से मैंने ये सीखा कि किसी से बच्चों के लिए लिखने को कभी नहीं कहना चाहिए। मैंने अपने समकालीन सभी बड़े लेखकों से आग्रह करके चकमक के लिए लिखवाया और उन्होंने लिखकर भेजा भी, लेकिन अधिकांश हमें लौटाना पड़ा। शायद हम बच्चों की सोहबत करना भूल ही चुके हैं। हमारी सोच में बच्चे कहीं नहीं हैं। बच्चों के लिए वस्तुएं और अवसर जुटा देना भर है। पिछले पचास साल के हिंदी साहित्य में उल्लेखनीय या महत्वपूर्ण बाल चरित्र नहीं है कुछ अपवादों को छोड़कर।

बच्चों के लिए लिखने और बड़ों के लिए लिखने में आपने क्या फर्क महसूस किया?

बच्चों के लिए लिखने के लिए अलग तरह से सोचना पड़ता है। सोचना पड़ता है कि बच्चे किस तरह देखते हैं, कैसे सोचते हैं, उनके मजाक कैसे होते हैं, दुःख कैसे होते हैं, वगैरह। शायद इसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। मुझे राजस्थान के अद्भुत कवि नन्द चतुर्वेदी याद आ रहे हैं जो अपने से चार पीढ़ी बाद के बच्चों से भी घुल मिल सकते थे और उनके मन की बात ताड़ सकते थे।

प्यारे भाई रामसहाय की कहानियां लिखने का विचार कैसे आया?

'चकमक' के साथी सुशील शुक्ल के दबाव ने 'प्यारे भाई रामसहाय' लिखवा लिया। ◆

स्वयं प्रकाशः हिन्दी के जाने-माने कहानीकार। सेवानिवृत्ति के बाद पूर्णतः लेखन के लिए समर्पित।

पल्लवः लगभग एक दशक से हिन्दी साहित्य का अध्यापन, हिन्दी की लघु पत्रिका 'बनास जन' के संपादक। संप्रतिः हिन्दू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में साहित्य के प्राध्यापक हैं।

संपर्क : 8130072004; pallavkidak@gmail.com

मुख्य आवरण के चित्रकार...

इस्माइल गुल्गी पाकिस्तान के एक मशहूर चित्रकार थे। उनका जन्म 25 अक्टूबर, 1926 को पेशावर में हुआ था। उनकी शिक्षा अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, कोलंबिया यूनिवर्सिटी तथा हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में हुई थी। वे स्वयं-दीक्षित चित्रकार एवं एक योग्य इंजीनियर थे। 1950 में पहली चित्र प्रदर्शनी की। गुल्गी की कला इस्लामिक सुलेख की परम्परा और अमेरिकन 'एक्शन पेंटिंग' से प्रभावित है। व्यक्ति चित्र बनाने में उन्हें महारत हासिल थी। 16 दिसम्बर, 2007 को उनकी हत्या कर दी गई थी। उन्हें प्राईड ऑफ प्रफोरमेंस, सितारा-ए-इम्तियाज (दो बार) तथा हिलाल-ए-इम्तियाज पुरस्कारों से नवाजा गया था। ◆